द्वितीय अध्याय
नौवें दशक की कविता का स्वरूप
tथा उसकी विशेषताएँ
2.1 पृष्ठभूमि

नौवें दशक से अभिधार्मिक 1981-1990 में प्रकाशित हिन्दी कविता से है। स्वातंत्र्य-वादक आधुनिक कविता की 'शुरुआत (1943-54)' से मानी जाती है। प्रथमवाद के बाद आधुनिक हिंदी कविता नवी कविता के रूप में विकसित हुई। (1950-64) नवी कविता का आरम्भ सन 1954 में जगदीश गुप्ता तथा रामचंद्र लुहुरेडी के सम्बन्धित नवी कविता' के प्रकाशन से माना जाता है। नवी कविता के बाद आधुनिक हिंदी कविता का विकास समकालीन कविता के रूप में 1965 में हुआ। समकालीन कविता आज भी विकसित है, जिसे हम दशक के रूप में इस प्रकार देख सकते हैं।

1) समकालीन कविता का सातवाँ दशक (1961-70)।
2) समकालीन कविता का आठवाँ दशक (1971-80)।
3) समकालीन कविता का नौवाँ दशक (1981-90)।
4) समकालीन कविता का दसवाँ दशक (1991-2001)।
5) एककीयवादी कविता का पहला दशक। (2001 से अब तक)।

आधुनिक कविता के अध्ययन के क्रम में नौवें दशक की कविता की असाधारण महत्व प्राप्त हुआ है। नौवें दशक की कविता का विकास आधुनिक इतिहास की सबसे जटिल परिस्थितियों के बीच हुआ है। क्योंकि यह दशक राजनीति की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। आधुनिक हिन्दी कविता का विकास प्रक्रिया में इस दशक का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

नौवें दशक की कविता ने जीवन के सभी पहलुओं को छुआ है। “नौवें दशक की कविता आम आदमी के जीवन संस्कृतियों, विकृतियों, विसंगतियों, विषयों एवं विद्वेषों की खुली पहचान है। इसमें जिंदगी की अर्थ और अपाहिज बना देनेवाली विसंगतियों एवं विकृतियों को बिना किसी संकोच के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह कविता उत्पीड़न दशा के प्रति सहानुभूतिपूर्ण है और आदमी के मूल अविचारों की जोरदार वकालत भी करती है। अर्थात् इसका रचना विधान तारिक एवं भावनात्मक है। जब कवि मनुष्य की उत्पीडित दशा का चित्रण करता है तब उसकी अभिव्यक्ति मानवीय संवेदनाओं से जुड़कर अलग भावना हो जाती है। इसलिये इसके कथ्य में भाव एवं विचार दोनों का समावेश है। यही कारण है कि
नौवें दशक की कविता व्यक्ति और समाज दोनों की संबंधनाओं, परोपकार द्वारों एवं परिस्थिति जन्य तनावों का साक्षात्कार करती है।”

नौवें दशक की कविता, पूर्ववर्ती अन्य आद्यवलन से अपनी विशिष्ट पहचान रखती है। इस कविता का केन्द्र बिंदु ‘विचार’ है। इस दशक की कविता व्यक्ति की नियति, सोच विचार, आशा निराशा, आलोचनाविचार से निजी सरोकार रखती है। वह मात्र इसकी हमदर्दी ही नहीं सहयोगी भी है। नौवें दशक की कविता को अपने समय और समाज का जीवित प्रामाणिक दस्तावेज कहना उचित होगा। इस दशक की कविता पर तत्कालीन परिवेश का प्रभाव रहा है। आम आदमी की बसानी-भाव तथा तदपि इस दशक की कविता में प्रखर रूप के साथ प्रस्तुत रही है। इस दशक के कवि तथा कवितियों ने पर्यावरण सजगता दिखाई है तो कुछ ने प्रदूषण के सवालों को उठाया है। इस दशक की कविता में पर्यावरण सजगता उभरकर आई है। इस कारण इस दशक की कविता कई संबंधों से जुड़ी हुई है। नौवें दशक की कविता के संबंध में कडाकराण सिंह का मत इस प्रकार है, “नौवें दशक के शुरु में कविता अस्तित्व को लेकर बहुत-सी शांतां व्यक्ति की गई थी पर शांति के अनितम दशक के द्वार पर दस्तक देने से पहले हम देखते हैं कि कविता न सिर्फ जीवित है बल्कि उसने अपने जीवित रहने के संघर्ष को मानव अस्तित्व के मूलभूत संघर्ष के साथ बहुत दूर तक एकाकार कर लिया है।”

2.1.2 विशेषताएँ

नौवें दशक की कविता, विचार और संबंधना दोनों ही सत्रों पर सामाजिक संस्कार से बड़ी गहराइं के साथ जुड़ी हुई कविता है। सहज सामाजिक सरोकार और आदर्शत्व की तदार की कविताएँ हैं। इस दशक की विशेषता है कि विभिन्न चरित्रों के रचनाकारों का सृजनात्मक केन्द्रीय स्वर एक ही है। जो समाज के सिद्धांत स्तरों पर साक्षात्कार संबंधनाओं से गहरा लगाय रखता है। राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय संदर्भों से भी इस दशक की कविता जुड़ी है। इस दशक की कविता में विषय, व्यंग्य, आर्थिक विश्वास, बैठने का समन्वय दृष्टिगोचर होता है। आम आदमी का वेदनाभाव, पर्यावरण संचेतना, दलित नीति, आदि कई विषय इस दशक की कविता से समबंध रहते हैं। इस दशक के कवियों ने अपने अन्त: विचारों को संबंधना की व्याख्या के मध्यम से जन सामाजिक पहुँचाने और उनके अस्तित्व और अस्तित्व पर आये संस्कृति के प्रति जागरूक करने का सार्थक प्रयास किया। डॉ. वेदनाकार अभिवादन लिखते हैं, “नौवें दशक की कविता में आया व्यवस्था-विशेष और शोधितों
की पश्चातारा का बोध बहुत उम्र और आज़मक रूप में संबंधित है। उसमें विचार “कोलाज” के रूप में नहीं है, बल्कि वे चर्चा की भाषा और अभिव्यंजना में संशोधन रूप में पुलिंग लित के हैं।

इसलिए वे कविताएँ लिता बोलती हैं, उत्तरा ही व्यक्ति भी करती हैं। इसमें लिता वस्तु-वैषयिक है, उत्तरी ही कथन-फूड़क की विविधता भी है।” (3) अर: नौवें दशक की हिंदी
कविता व्रूणनिमलिखत विशेषताएँ हैं। दिराॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅॅ।

2.1.2.1 आम आदमी की वेदनानुपूर्ति

इस दशक के कवियों ने आम आदमी का सशक्त चित्रण किया है। आम आदमी परिस्थितियों के साथ निर्भरता से जुड़ा रहा है। उसका यह जुड़ना विविध स्तरों पर विद्यमान है वह परिस्थितियों से लड़ते-लड़ते कहीं कभी अपनी हार स्वीकार करता है। तो वह अपने आप में कुंद्रित होता है। इसी कारण उसका जीवन वेदना से भरा हुआ दृष्टिगत होता है। केदारश्च विन्सें ने आम आदमी का सशक्त चित्रण किया है - “कुछ लोग अब जा रहे हैं / जो अब भी खड़े है / अपने बोझ के इंतजार में” (4) “खेतों में खड़ी फसल / गोदामों में भरा अनाज/दूकानों में भरे कपड़े / बढ़-बढ़े मकान / इतने नज़दीक तो दिखाई देते हैं / लेकिन इनको पा लेना बहुत कठिन है।” (5) “पेट पीठ से चिपका हुआ है और रोटियों के बाव आसमान चढ़े है।” (6) “सहसा बाँछों की ओर में / दिख जाती है एक खी / उपर खड़े चटर्ती हुई / बूढ़ों की मार से जल्दी-जल्दी उपालों को बचाने की कोशिश में भीगती है वह बचाती है उपरले /” (7) “बूढ़ा मानता है / चुड़े की मौत / भले ही उसे मरना पड़े / मगर आदमी की जितनी / किसी भी शर्त पर उसे जीना न पड़े।” (8) “और एक दिन चन्द सिक्कों के पीछे / सारे आम / निलम कर दिया।” (9) “पशु से भी बदतर / आदमी का हाल / अस-व्यस्त।” (10) “कहाँ गये वे मज़दूर / फिर किसी काम की तलाश में / फिर किसी ठीक़कर के बैंगले पर।” (11)

2.1.2.2 स्वाधीनता की नयी अभिव्यक्ति

नौवें दशक कविता में एक बार फिर आज़ादी का पूर्णवृत्ताकार किया है। स्वाधीनता उपरान्त के 40 वर्ष के बीच जो भी बदलाव हुआ उस बदलाव की आशा-आकाशों का निमित्त नौवें दशक की कविताओं से अभिव्यक्त होता है। आज़ादी के इस वर्ष में जो स्वाधीन भारत के सपने देख गये वे दिन-ब-दिन धूमल होते गए, राजनीतिक मूर्तियों का पतन होता रहा इसी कारण आज राजनेताओं की वृद्धियों में आज़ादी एक कागज दलचंद सी दिखती है। कमल कुमार ने 'गवाह' इस कविता संकलन में आज़ादी का सशक्त चित्रण किया है।
“आजादी के पेड़ से / पतियों और तहनियां गायब है / राजनीति का बौद्ध खड़ा है।”
राजनीतिदेशों ने जनता की आजादी पर अपना शिकंजा कसना शुरू किया। “नहीं-नहीं, पर बैठे हुए लोगों से / अब उम्मीद करना बेकार है / बाहर शान्त रहे की तीखियाँ लटकाकर / वे भीतर हिससे बौट रहे है / जनता की आजादी को तेज नाखुनूं से काँटे रहे हैं।”

“वह मेरे माये पर / अपनी आजादी का पोस्टर चिपककर / मेरे कानों के पारदे फाड़ते हुए / बुलबुल आवाज में / अपने हकों के नारे लगाता है।”

“मैंने कब मांगी है / एक बूढ़े तुमसे /हरे-तिली फैलकर ? खुन मांगनेवाले माँग चुके / बदले में आजादी पा चुके अब में।”

“हर बार आयेगा आजादी का पर्व / लाल किले पर राष्ट्रनेता फहरायेगे ध्वज / जन नेता हर बार तिरंगे तले / गरीबी दूर करने का दंगे आशासन।”

“हैवानियत का बड़ा गया आकार / वाह स्वतंत्रता, वाह खुश दिया हमें पुरस्कार चिल्लाना तो दूर रहा साँस लेना भी कर दिया नहीं।”

2.1.2.3 गाँव के प्रति आश्वास

भारत की लगभग अस्सी प्रतिष्ठा जनता गाँवों में निवास करती है। गाँव हमारी आधार और सम्पत्ति के केंद्र रहे हैं। नौवे दशक के कावियों ने गाँव के प्रति बड़ी आत्मीयता जतायी है। गाँव याने प्रकृति के सिराज, खेतों और जनानवाले किसान, सिद्धार्थ के घर, उग्र हुई फसल, नवियों, नाले, घटकी चिड़ियाँ दूरीत्व किये होते हैं। राष्ट्रपति गाँवी ने भी गाँव का सम्पर्क किया था। गाँव शहरों की अपेक्षा प्रदूषण से भरा है। गाँव में हमें मननेवाला के दर्शन होते हैं। गाँवों में जितनी आत्मीयता देखी जाती है वह शहरों में नहीं होती। गाँव शहर की अपेक्षा आतंकवाद से भ्रामित नहीं है। गाँव हमारी संस्कृति के अमोल धरोहर रहे हैं। आज गाँव का आदमी भी शहरों से प्रभावित हो रहा है। गाँव के आदमी काम-काज के लिए शहरों की ओर जा रहे हैं। शहरी जीवन से यातना वह मनुष्य गाँव का समर्थन करते हैं। शहरों के आदमी गाँव के प्रति दयालु रखना चाहते हैं। नौवे दशक के अधिकांश खबर गाँव से जुड़े हुए हैं, गाँव के परिवेश में ही पले-पूरे, बड़े हुए हैं। गाँव हमारे लिए आज भी महत्वपूर्ण है।

केंद्र की कक्षाओं में गाँव के संस्कार, महत्व दोनों देखने को मिलते हैं। केंद्रीय जी चढ़ते हैं, “बौद्ध का निवासी / गाँव से आया, गाँव के संस्कार लिये / जातीय जन-जीवन की / भाषा स्वीकार किये।” हरिद्वार व्यास जी को महानगरों में जाने के बाद गाँव का परिवेश याद आता है। “भू मोड़ता है /जमीन की याद में।”

“बैबस जी भी गाँव की महत्ता को स्पष्ट करते हैं। वह शहर में जीवन व्यापन करते हुए भी गाँव की याद उन्हें सताती
है।”[(20)] “कवि ऋषम सिंह शर्मा में रहकर गाँव के प्रति उनका प्रेम झलकता है।”[(21)] “मैं उस सहज मिट्टी पर निर्माण चलकर, अपने गाँव पहुँचता। अब, मुझे जल्दी ही पहुँचना/ अपने गाँव।”[(22)] “नींद की गहराई का अनुभव करता हूँ में / जब कभी आता हूँ अपने गाँव की इस अमराई की छाया में।”[(23)] ऋषमभारु राम चंद्रिया गाँव में देश को देखते हैं, “गाँव में बसा हुआ देश है।”[(24)]

2.1.2.4 गरीबी एवं अभावग्रस्तता

औषधीकरण तथा आर्थिक सता असमृतन के कारण अमीरी-गरीबी के बीच के अंतर को अधिक पात दिया है। यात्रिक युग में जहां मजदूरों को काम से हाव घोना पड़ा वहीं उन्हें घर लौटने पर विवश होना पड़ा। फल्सा-तीस मनुष्यों का काम मशीन के दास्वा अकेला आदमी कर रहा है, जिससे मजदूरों की समस्याएं बढ़ गई। मजदूर बेचारा हो गए हैं। तीस आदमी को बिना देने के बहले एक ही मनुष्य से काम होने के कारण अमीर और अधिक धनवान बन गए, गरीब गरीब ही रह गया। गरीब आदमी के पेट का सबाल हाल ही न हो सका उसकी यह दुर्दशा विभिन्न स्तरों पर हमें दिखाई देती है। मंहागाई, अश्विन, अभावग्रस्तता, बड़ा परिवार, अंध-विश्राम रोग ग्रस्तता, जैसे कई प्रकार दीन आदमी के साथ एक साथ जूद जाने के कारण ऐसे में गरीब की अवस्था अत्यंत शोषणीय हो जाती है। गरीब आदमी अपनी आर्थिक स्थिति से उबरना चाहता है, लेकिन उसकी स्थिति जैसी थी वैसे ही रह जाती है। नौवें दशक की कविता में गरीबी एवं अभावग्रस्तता का व्याख्या चित्रण हुआ है। व्यास जी अभावग्रस्त धूःधूः के कारण हुई धूःधूः हत्या का सरकार चित्रण किया है। "भूख बेचारे उपेक्षा अनिश्चित से / सबकी धूःधूः हत्या हो गई / वे दरों बेचारे / आजमे ही मारे गए।"[(25)] विभिन्न समस्याओं के कारण गरीब की अवस्था इस तरह हुई है - “घरन न मिला / धूःधूः है / तेल न मिला / अंधेरे में हैं / नींद को मिली / बेचारे हूँ / महीने का बेतना न मिला / मां का काम उप है।”[(26)] ‘भूख जब घटनाओं के बल खड़ी होती है / तब वह भरा बंदूक होती है।”[(27)] ‘भूख से उसकी आति कुलबुलाती रहती / वह जानता है मजदूर के नाम पर लाख धूसे और गालियों के सिवाय / कुछ नहीं मिलेगा।’[(28)] “जो खेतों में आत्र उगाता, उसका घर भूखा सो जाता।”[(29)] “आँख में आँसू / पेट में भूख/ नंगे पाँव / चूटी हुई छत / आँधी के झोंके सह लेता है।”[(30)]
2.1.2.5 महानगरीय बोध, सभ्यता का खोखलापन हीनता बोध

महानगर का जीवन अंधेरे से शुरू होकर अंधेरे में ही समाप्त हो जाता है। महानगर
गतिशीलता का प्रतीक है। महानगर का संरचनाशील जीवन सुरूवात के रूप में होकर टूटना,
घुटन और भयानक संसार में समाप्त होता है। एक दूसरे की होड़ एवं अपनी आवश्यकताओं
की पूर्ति में संलग्न मनुष्य निरन्तर गतिशील बना रहना चाहता है। विशाल लेख के वह पिछला
नहीं चाहता। इसी तेज गति से दौड़ने वाले मनुष्य के जीवन की आत्मीयता और मानवीयता
का चंद्रों में परिवर्तित होना स्वाभाविक है। “इस दशक की कविता महानगरीय जीवन-समाज
tथा समसामयिक विषयों पर विचारनामों का दस्तावेज है, जिसमें व्यक्ति की नियति,
तोच, आशा, निराशा, सुख-दुख, संघर्ष निर्दयता, हिंसा प्रवृत्ति और जातिलोगों के चित्र
अखिल हैं। कवियों ने ऐसे ही चित्रों प्रतिकात्मकता एवं सहज बोधगम्य भाषा-रौष्ट्री में विकसीत
के साथ उभरने का सफल प्रयास किया है। महानगरों से सम्बन्धित कविताओं में व्यक्तम्
जीवन, गरमी से मुखाए, हूफ़ते-दौड़ते आदमियों, बसों, ट्रकों, टैम्पों, स्कूटर आदि के
प्रदूषण, दुर्घटनाओं, विज्ञापनों की अतिरिक्तता तथा आफ्रिका से लेकर फिलिप दिनियां तक के
चित्रों को सजोया गया है। साथ ही इसमें अजनबीयन, कृतिम् व्यवहार, औपचारिकताओं और
अनन्त अपेक्षाओं आदि का भी चित्रण सजीव है।”(31)

नौवें दशक की कविता में महानगर सम्बन्धी कविताएँ देखने के मिलते हैं। कवि
हरिनाथसिंह व्यास ‘बरगाड़ के बिचकने पते’ कविता संग्रह में शहरों के महाॅल का आलंकार
चित्र मिलता है। “हर रात तर दिन के उजाले में चाकू छूटी और बमो का होना भी बा सुबूत
है।”(32) प्रेमशंकर रघुवंशी ने शहरी चकचाचौध को अभिव्यक्ति किया है। “कलों में
ड्रिस्क/कमर में रोलिंग से गुजरते / प्लानों के झाड़दार लघुस्तर में / नितनों की मछलियाँ
निकाहते / कोई के प्लानों की झनक छूटती है और बलात्कारी सनाटा।”(33) ब्रजेश त्रिपाठी
दिल्ली की निरंतरता ‘तलाश’ इस कविता संग्रह में व्यक्त करते हैं - “बड़ी निर्मित है / दिल्ली
/ यह पहले आपको / आपकी जड़ों से / नतीजा है / चीन लेती है गाँव घर / मे, बाप,
भाई-बहन / रिस्ते नाटे, मोह, छोटे / दया माया सच्चाई-ईमान / दिल्ली / आपको आदमी
नहीं रहने देती ना देती है / मशीन”(34) “आदमी के लिए नहीं बंधु के लिए खुलता है /
शहर का दरवाजा।”(35) “इस दिल्ली यकीन के साथ कि / तुम शेयर-शाशव में यकीनन कहीं
नहीं होंगे।”(36) “इस्लाम यहाँ कमरे में बनता है। कोई पत्थर नहीं / एक मशीनी
जिन्दगी।”(37) “यहाँ हुआ सलाम / हैसना बोलना/ मिलना जुलना / धंधे से जुड़ा होता है / ईमानवार आदमी का चेहरा / हमेशा / उठा उठा होता है।”(38)

2.1.2.6 पर्यावरण संचेतना

नौवें दशक की कविताओं में मुख्य रूप से पर्यावरण संचेतना की प्रृवति विशेष रही है।

इस दशक के कवि एवं कविताओं ने प्राकृतिक परिवेश और मनुष्य के बीच सामाजिक स्थापित करना चाहा। उन्होंने पर्यावरण असंतुलन और मनुष्य द्वारा फैलाए गए हवा, ध्वनि, पानी प्रदूषण का सजग होकर मनुष्य को जागृत करने का प्रयास किया है। प्राकृतिक परिवेश का महत्व एवं पर्यावरण संचेतना रखने के लिए मनुष्य को सजग किया है।

हरिनारायण व्यास “प्रकृति परिवेश तथा मानव का उससे गहरा रिश्ता स्थापित करते हैं,” “सूर्य से जुड़कर मेरी सार्थकता है।”(39) प्रयाग शुक्ल “शहर की ऊंचाई से भी पेड़ की ऊंचाई अधिक होने की बात करते हैं।”(40)

इस दशक के अधिकांश कवि तथा कविताओं ने पर्यावरण को केंद्र में रखकर कविताओं की रचना की है। स्नेहमयी चौधरी प्राकृतिक वातावरण में ही रहना चाहती है, वे कहती हैं “जब मैं पेड़ों, पोथियों, पुलियों/ पत्तियों, थाँगों, खेतों, खलानों/ खुले आसामन /पहाड़ दरिया / जैसी चीजों और लोगों के बीच होती हैं/ तो जी उठती हूँ।”(41) भवानीप्रसाद मिश्र जी ने ‘नीली रेखा तक’ कविता संग्रह में प्रकृति की चेतनता तथा मानव जीवन का गहरा रिश्ता स्थापित किया है। “हम उतर आते हैं / चढ़कर पहाड़ों से / निकल आते हैं / धुंधकर / बनों के बाहर/ मगर पहाड़ / याद रखता है / हमारा चढ़ना / वन याद रखता है / हमारा घूम-फिरना / याद रखती है नदी .... / हमारा उसमें तैरना / चूमना और उतरना /वे पहाड़ हैं / वन है, नदियाँ है और फूल हैं / और इसलिए / शायद है जिददी।”(42) पंकज सिंह अपने आपको प्रकृति के सहचर में पाते हैं, “बास तिनके, फूल, पोथ से है पहाड़ों के अनेक/ में इसी में हूँ सिकाये माथा पत्थर पर।”(43)

आज विश्व का हर मनुष्य प्रदूषण से पीड़ित होता जा रहा है। प्रदूषण की समस्या मनुष्य ने ही निर्माण की है। स्नेहमयी चौधरी जहरीली गैस की भयंकरता से अवगत करती है-“न जाने किस क्षण छिड़ जाए / जहरीली गैस की ही लडाई / अपाहिज हो जाए हम / गुरु खराब हो जाए हमारे / अंधे से जाए या पंकड़ गी खराब हो जाए।”(44) ललित शुक्ल कहते हैं, “उन्हीं धीमौहरों से केवल धुआं दिखाई देता है।”(45) नदी की मीठ पर इस कविता संग्रह में नीहार बुधदेव प्रसन करते हैं, “प्रदूषण से काला सूरज भविष्य में हमें क्या दे
पाएगा।”(46) भोपाल गैस की भयानक ग्रामीण राजेश जोशी के ‘मिट्टी का चेहरा’ इस कविता संकलन में व्यक्त हुई है ‘भागो भागो भागो। जहाँ भी खुला हो / थोड़ा सा आकाश / जहाँ भी बची हो / थोड़ी सी हवा पतिव / ‘भागो भागो भागो / चीखता है/ सारा शहर।’(47) दिन-ब- \nदिन बढ़ते प्रदूषण के कारण हर व्यक्ति विश्वसुप्रजा हो रहा है। “प्रदूषण / बढ़ता ही जा रहा है / शहरों से गाँवों तक / हर व्यक्ति / हो रहा - विश्वसुप्रजा।”(48) “मत करों मेरे शहर का / आकाश / तुम इतना मैला / कि में / छाया से / देख ही न पौध / उजले गूह का चाँद।”(49)  
2.1.2.7 स्वी के प्रति नया वृद्धिकोण  
स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद खी चेतना का जागरण हुआ है। धीरे-धीरे वह ‘स्व’ का \nअधिकार एवं असम्पन्नता के प्रति जागरूक और संपर्कशील बन गई। समाज सुधारकों ने स्वी राजतंत्र का केवल नासी ही नहीं लगाया बल्कि उनके सुधार के लिए प्रयत्न भी किए। अज स्वी सबला के रूप में उभर रही है। अज हिंदा के उत्पत्ति क्षेत्र में स्वी ने अपना अधिकार स्थापित किया है। वह अब पुरूष के कंधे से कंधा मिलाकर हर क्षेत्र में कार्यरत हो गई। अर्थिक क्षेत्र में भी वह खुद पर निर्भर रहने लगी है। उसकी उंची उड़ान आकाश में भी पहुंच गई है। उसी प्रकार श्रीमती इंदिरा गांधी पहली भारतीय महिला पंतप्रधान बनी। स्वी अच प्रसार के हर क्षेत्र में सजन और सचेत हो रही है। स्वी अक्षर निर्णय लेने लगी है। नौवें \nदशक में उनका तेज अपेक्षाकृत आक्राक्ष हुआ है। स्वी अपने अधिकार ‘स्व’ एवं असम्पन्नता के \nप्रति जागरूक और जुड़ुए होने गई है। नौवें दशक में स्वी का हक्केखाता में क्षमापन, अपने \nअधिकार के प्रति सजगता का स्वर मुखर हुआ है। इस दशक की कविताओं में स्वी का नया \nउभरता हुआ रूप दिखाई देता है। 
कमल कुमार स्वी के बदलते हुए रूप को दर्शाती है “आरत होने का अर्थ / बदल \nगया है।”(50) सत्यपाल चुप स्वी की सप्त खेत्रों में हुई तरक्की को अभिव्यक्त करते हैं, “देखो \nना आज कौन है / नारी की नीति-कुशलता जो सर्वाधिक सत्ताओं पर भी/ कर सकी \nअधिकार।”(51) “मुझे प्यार है उस आरत से / जो अपने बच्चे को चंच से बांध हाथ में \nबन्दूक ले काम करती है खेतों में।”(52) “वे जानेंगे अब / कि आरत / न घरती है न खेत / \nन फूल न ढाली / न सीता न काली / न दौड़ी पदित्ती / महज एक आरत है / जैसे \nआमी / आमी है।”(53) “आरत वह समृद्धि दुनिया है / जिसे घर कहते है / और यह देश \nसे बड़ी चीज है।”(54) “नारी को जिसने अबत्ता कहा है, उसी ने धोखा खाया है।”(55)
“कुल की इजजत आदी दुनिया है / जहाँ अर्थना होती उसकी / वह देवता रहते है / वह सीता देवकी है / वह जननी है।”

राम ने उसके लिए ‘चिलाखण्ड’ कविता संरचना में सी की खोज एवं मानसिक मुद्दत के लिए कोशिश सर्वहारी है। “उन रिस्तों और ‘व्यक्ति’/ के बीच का संबंध / एक ठोस \dash / पैर जमाने की चेहरा में रह / एक नैतिक सहारे की तलाश / और अब चेतन मन में एक मानसिक मुद्दत का अहसास।”

2.1.2.8 व्यंग्य

स्वतंत्रता के प्रकाश पर व्यंग्य अपने सही रूप में आया। व्यंग्य के कारण कविता अधिक सार्थक रूप पा लेती है। समकालीन कवियों में व्यंग्य बड़ी मात्रा में दिखाई देता है। नौवे दशक के कवियों ने व्यंग्य का सहारा लेकर देश में फैला अनाचार, हिंसा, आतंक, सामाजिक पाखंड, प्रश्नचारी, शोषण को उजागर किया। केदारनाथ अभीष्टन भूषण जनसत्ताती किसान व्यंग्य के सहारे अभिव्यक्त किया है - “जनसत्ताती नेती औरत है / कई साल से जो मुर्ग में / अंतिम के अंधे भूखी/ कई जनतातीली गुंडों देश-देश के जो स्वामी है।”

“मिल मालिक का बड़ा पेट है / मजदूरों को नहीं छोड़ता / उन्हें चूस कर तो तोलना एकाकी स्वर्ग भोगता।”

“दुनिया-पर की शानि/आज केवल / हिंसा का खेल / और बूढ़ो / इन दो भूखों की एकलाती रखेंगे हैं।”

“इसलिए कहता हूं / हमसम मेरे दोस्त / ऑफिस हो काम/ नोट लेकर जाओ / अफसर के हो द्वार बन / तो चपासी को भेंट चढ़ाओ।”

नौवे दशक के अनेक कवियों ने व्यंग्य के सहारे अपने भाव को अभिव्यक्त दी है।

2.1.2.9 दलित चेतना

हिन्दी कविता के क्षेत्र में दलित चेतना का स्वर बुलंद होता गया। नौवे दशक की कविता पर इसका प्रभाव देखने का मिलता है। डॉ. अमेठी की विचारधारा को लेकर दलित साहित्य सामने आया है। अमेठी के परिवर्तन के बाद दलित साहित्य पुनर्जीवन लगाकर उभरा। शोषण के विरुद्ध दलितों का स्वर समाज में लगे अरसे से गुंजा स्वरूप हो। कई समाज सुधारक इस विरोधी तेज के रहनुमा बनते रहे हैं, पर देखा जाए तो दलित चेतना की नींव समकालीन परिस्थिति में मूलतः अमेठी के अपूर्व काम को पूरा करने की कोशिश है। दलित चेतना का मुख्य मुद्दा रहा है जातिविषयक विषय को नष्ट करना। नौवे दशक की कविता में भी वही रूप देखा जा सकता है। इस दशक के कवियों ने दलित चेतना को वापस दी। दलित की यथार्थ परिस्थितियों को अपने अनुभूति के सहारे प्रकाश चेतना जगायी। इन कविताओं में
समकालीन दौर की अधिक परिपक्वता आ गई। जाति-जाति के बीच के भेदभाव को लेकर दलित कवियों में तीन आक्रोश है। “दलितों पर होने वाले अन्याय और अत्याचार का कवियों ने सकत विरोध करते हुए, उनके प्रति गहरी आफ़्मिता का परिचय दिया है और दलितों में पनप रही संघर्ष चेतना को बहुत सही उठराया है।”(62) तत्कालीन लोगों से जब तक जाति के बंटन को तोड़ने वाले युग का अपेक्षा करते हैं। “महनतमत होने पर भी, जो पैदा नहीं भर पाते हैं। इन दलितों की अब और अधिक दुर्दशा नहीं देखी जाती यह जीवन भी व्या जीवन है यह देख देख पति छा।”(63)

श्रीमान सिन्ह जी गुरु को गुरुदक्षिणा के रूप में अंगुला देने पर उस शिष्य का विरोध करते हैं, “एकलव्य / तुम्हें भोला भंडारी कहूं या जानी मुख्य जो अंगुला काटकर / दे बैठे जो ऐसे गुरु को है / दक्षिणा में जिसमें तुम्हें नहीं सिखाया था / क-ख-ग भी / धनुर्विधा का।”(64)

“भारत आज भी जंगली युग में जी रहा है / संस्कृति और दलः / की असिद्धता पर हमला हो रहा है।”(65) “अब तो चेत किया मेरे भाई इसका वेद सकल झूठे, बुझी जाति बनाई।”(66)

मनोज सोनकर ने अपने प्रबंधकाव्य ‘शोकिताना’ में पांच हज़ार वचनों से चले आ रहे दलितों के मानसिक और आर्थिक शोषण को, बड़े ही प्रभावशाली तंग से उभारा है। कवि ने अन्याय, अत्याचार और शोषण के निकटस्थ संस्थ की घोषणा की है। रमणीका गुप्ता भी दलितों के लिए संघर्ष कर रही है। उनका भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनका दलितों को अर्थिक, सामाजिक न्यूय दिलाने का प्रयास सराहनीय है। दलित कविता लिखनेवाले अन्य कवियों में डॉ. धर्मवीर, रामदास निमेश, रवीराज सिंह ‘बेचैन’ आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इन कवियों ने दलितों को अपने कविता के माध्यम से चेतना किया है। इस दशक में दलित चेतना प्रगति का स्वर हम देख पाते हैं।

2.1.2.10 आक्रोश एवं क्रांति का भाव

नौवें दशक कविताओं में आक्रोश एवं क्रांति का भाव भारतीय तथा अन्तरराष्ट्रीय परिवेश के कारण ही उपजा है। “राजनीति के सौदेबाजों के मिश्चर और बहकाने वाले कारोबारों से समाज की स्थिरता दिन पर दिन विगड़ी गयी। ऐसी रिश्तें में पूरी व्यवस्था तंग के प्रति ही उसमें व्यापक असंतोष का भाव जागृत हुआ। इसके विरोध में समकालीन रचनाकारों ने तेज़ीबी भाषा का प्रयोग किया और विरोध जाहिर किया। विरोध के कारण कविता के स्वर में पर्याप्त आक्रोश आया।”(67) भारतीय समाज में व्याप्त जड़ता, निष्क्रियता, विसंगति और विफलताओं के कारण नौवें दशक की कविता में आक्रोश एवं क्रांति का स्वर तीव्र हुआ है। आक्रोश एवं
क्रान्ति के द्वार विकसनशीलता के दौर में होना नवनिर्माण की अभिलाषा प्रकट करता है। अपने शोषण के खिलाफ आवाज उठाकर, स्व-चेतना को जगृत कर अपने की न्याय दिलाने का प्रयास हर एक मुनुष्क करता आया है और वह कर रहा है। इसी तरह स्व-न्याय का प्रयास एवं मुक्तिन नौवें दशक की कविता में मुख्य हुई है।

कवि ललित शुक्ल अपनी वेदना और तड़प की अभिव्यक्ति के लिए जिह्वा की आवश्यकता महसूस की गई- "भगवान मेरा सबक्कुछ तेले / पर जिह्वा मेरे पास रहने दे / पिची तिलमणे के लिए / आत्माली धीरा को समय की माता पर / तिपक्कने के लिए।"(69) मद्होश कृष्ण अपनी कविता में संघर्ष करने का आह्वान करते हैं- "अब हमें संघर्ष करना होगा जग, समाज और अपने आप से।"(69) "क्रान्ति / एक अर्थ है / जिसके / दरवजें को / स्थलांक / संघर्ष से ही / खोला जा सकता है।"(70) नरेंद्र मोहन स्वाधीनता आक्रोश के माध्यम से व्यक्त करते हैं। "और में देखता रहा / चिरा-चिरा / सलाबंध गिनता / बड़बडाता / ‘स्वाधीनता मेरा जन्मसिध्द अधिकार है।’(71) "काले उजाले से भयभूत / छोटे / को पीछे हुए / ओडों को / अपने किसी-न-किसी / सिम्म हुए नहीं रखना चाहिए गुज़े / कहीं भी क्यों न रहूँ कहना चाहिए निर्माय अपनी बात।”(72) "बोलना है तुम्हें तो बोलो / और भी बोलो / और बोलो अभी / कल बहुत संभव है/ खुले धमनियों में जम जाए।”(73)

2.1.2.12 आतंकवाद का बोध

नौवें दशक पर आतंकवाद का प्रभाव दिखाई देता है। आतंकवाद ने एक ओर जहाँ देश की एकता और अंकलों को खुली चुनौती दी है, वहीं आम आदमी को भीरू, संकट और कार्यर से बनाया है। पंजाब और कश्मीर में आतंकवाद के कारण दिन-ब-दिन मुनुष्क आतंकित होता जा रहा है। "आठवें दशक में आपातकाल की घोषणा के साथ आतंक का जो दौर शुरू हुआ, नौवें दशक में उससे आतंकवाद का रूप धारण कर लिया। आतंकवाद मानवता, मानव-संस्कृति और मानव मृत्यु के लिए सबसे बड़ा खतरा ही नहीं, मानवता के नाम पर कलंक भी है। यह एक जनता अपराध, भीषण कुक्कुल और बहशीपन है। सामान्य ‘पशुओं में भी ऐसी भीमता वरिष्ठी नहीं देखी जाती। नौवें दशक के कवियों ने इस बहसिता हस्तक्षेप पर न सिक्का बिना व्यक्ति की है, चर्चा अपने दंग से भटके हस्ताक्षरों को राह पर लाने की कोशिश भी की है।”(74) नौवें दशक के कवियों ने आतंकवाद से जुड़े सवाल को उठाया, उसकी प्रतिक्रिया में जन्मी अभावबीयता, धर्म और राजनीति के तालमेल से उत्पन्न विसंगति, राष्ट्रीय एकता को चुनौती आदि विभिन्न मुद्दों पर गंभीरता के साथ विचार अभिव्यक्त किए हैं।
केदारजी आतंकवाद की समस्या का विरोध करते हुए कहते हैं, कि दूसरों की जान लेनेवाले आतंकवादी नरकाम है और आतंक एक जमान्त्र अपराध। “आतंक समाधान नहीं / समस्या है - आसुती तपस्या है / न लोकिक होने की पहचान है, न आलोकिक होने का अभिज्ञान है / अपराध है अपराध / जमान्त्र अपराध है आतंक / नरकाम है आतंकवादी / प्रणाली आतंकवादी.” (75) आतंकवाद से देश की प्रगति अवरुद्ध हो जाती है। देश पर इसका वूरा प्रभाव देखने को मिलता है। आतंकवाद के कारण मनुष्य को किस तरह बूढ़ी तरह से प्रभावित किया है इसका यथार्थ चित्रण नरेंद्र मोहन ने किया है। “इससे पहले कि हम मूंग दिखाने लायक न रहे और दहशत के इलाके में खेड़-खटे अजनबी हो जाए एक दूसरे के लिए.” (76) “हाँ सच, उसे देखकर नहीं-मुनही मधुमली और बहुती की यद आती थी / दरिंदो ने / दनादन गोलियाँ चला दी.” (77) “फिर रंग गई धरती / किसी के रंग से / फिर आई किसी बुढ़ी माँ की चीख / फिर / मासूम बच्चे ने / प्रसन सूचक दृष्टि से निहारा/ मंगा आतंक का जवाब.” (78)

इस प्रकार नौवें दशक के कवियों ने आतंकवाद को नाश करने की गुहार लगायी है।

निष्कर्ष :

नौवें दशक से अभिप्रय 1981 से 1990 में प्रकाशित हिंदी कविता से है। नौवें दशक की कवियाँ ओ पर समकालीन कविता अर्थात छटे सातवें एवं आठवें दशक का प्रभाव रहा है।

नौवें दशक की कविता विचार और संबंध दोनों ही स्तरों पर सामाजिकता से बढी गहराई के साथ जुड़ी हुई कविता है। इस दशक की कवियों की विशेषता कि पुराने एवं नये सीमितों के रचनाकारों का गुजराति स्वर एक जैसा ही है जो समाज के हित के स्तरों पर समकालीन सम्बन्धों से गहरा लगाव रखते हैं। इस दशक की कवियाँ में विद्रोह, व्यवहार, आख्या, विशेषता, बेचैनी का समन्वय दृष्टिगोचर होता है। नौवें दशक की कवियों की विशेषताएं वे हैं - आम आदमी के वेदनामुक्ति का चित्रण, स्वाधीनता की नयी अभिव्यक्ति, गाँव के प्रति आख्या, खै के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव, दलित चेतना, पर्यावरण संरचना, आतंकवाद, अन्तरराष्ट्रीय राजनीति, युद्धादि प्रसंग, मनुष्य के बेहतर भविष्य की सकारात्मक दृष्टि।
संदर्भ संकेत

1) डॉ. यतीन्द्र तिवारी, नवे दशक की हिंदी कविता, भूमिका से
2) डॉ. पद्मा पार्टिल, यहाँ से देखो एक अध्ययन, पृ.23
3) डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, समकालीन कविता का परिदृश्य, पृ.24
4) केदारनाथ सिंह, अकाल में सारस, पृ. 2
5) हरिनारायण व्यास, बरगद के चिकने पते, पृ.3
6) श्याम बेबस, महतों में कैद रोशनी, पृ.13
7) केदारनाथ सिंह, अकाल में सारस, पृ. 49
8) कमलाकांत द्विवेदी, बैलत शाह के चुंबे, पृ.25
9) सुधा गुप्ता, अंधेरे के जुबान नहीं होती, पृ. 85
10) प्रभुदेव शार्मा, अवशेष, पृ. 56
11) अरुण कमल, सज़ूत, पृ. 45
12) कमल कुमार, ग्याह, पृ.23
13) प्रकाश मनु, कविता और कविता के बीच, पृ.29
14) कमल कुमार, ग्याह, पृ.40
15) प्रकाश कोंचन, स्वार्थ की सलीच पर, पृ.39
16) बलदेव वंधी (सम्पा.), सूत्रों ओ नदी रेत की, पृ. 47
17) उषा गुप्ता (सम्पा.), नदी काल्य प्रतिभाएँ, पृ. 175
18) केदारनाथ अय्याल, बोले बोल अबोल, पृ.138
19) हरिनारायण व्यास, बरगद के चिकने पते, पृ. 60
20) श्याम बेबस, महतों में कैद रोशनी, पृ.10
21) श्याम सिंह शाशि, झाड़ी आखर, पृ.15
22) रंगेशचन्द्र मिश्र, मरजीवा, पृ. 35
23) भवानीप्रसाद मिश्र, तूस की आग, पृ.97-98
24) उषा गुप्ता (सम्पा.), नई काल्य प्रतिभाएँ, पृ. 162
25) हरिनारायण व्यास, बरगद के चिकने पते, पृ. 74
26) श्रीमती, अंदर की और झोकने वाला आदमी, पृ. 8
27) वेदप्रकाश अमिताभ, बसेंत के इतिहास में, पृ.10
28) सुधा गुप्ता, अंधेरे के जुबान नहीं होती, पृ.84
29) प्रभुदेव शार्मा, अवशेष, पृ.70
30) नंद भारद्वाज (सम्पा.), रेत पर नंगे पांव, पृ.245
31) डॉ. यतीन्द्र तिवारी, नवे दशक की हिंदी कविता, पृ.188
32) हरिनारायण व्यास, बरगद के चिकने पते, पृ. 61
33) भ्रमशंकर रघुवंशी, अकाल लेती यादाएँ, पृ. 55
34) ब्रजेश त्रिपाठी, तलाश, पृ. 86
35) तुलसी समण, झलान पर आदमी, पृ. 37
36) हरिनारायण व्यास, बरगद के चिकने पते, पृ. 55
75) केदारनाथ अग्रवाल, अनहरी हरियाली, पृ.33
76) गुरुचरण सिंह, पंडित सुमन (सम्पा.), नरेंद्र मोहन रचनावली भाग-1, पृ. 225
77) सुधा गुप्ता, बुड्डी सदी और हैने टूटा हुआ आदमी, पृ.65
78) प्रमद राम, अवशेष, पृ. 69